P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-IV* ISSUE-II*October-2016
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

'झरोखे' का बालमनोविज्ञान

मन्जुला शर्मा
सहायक प्राध्यापक,
हिन्दी विभाग,
टी0 डी0 बी0 कालेज,
रानीगंज,पश्चिम बंगाल

सारांश

मनोविज्ञान हमारी मानसिक क्रियाओं का वर्णन, वर्गीकरण एवं विश्लेषण करता है। इसके अंतर्गत हम अपने संवेग और अनुभूति को जान पाते हैं। किसी कार्य के पीछे होनेवाली संवेग, मूलप्रवृत्तियाँ एवं प्राकृतिक तथा प्राप्त प्रवृत्तियाँ क्या है इसका निर्धारण भी मनोविज्ञान करता है। मनोविज्ञान अपने विस्तृत क्षेत्र के साथ व्यक्ति के सभी प्रकारों के व्यवहारों का अध्ययन करता है। कथाकार भीष्म साहनी ने फ्रॉयड के मूलभूत सिद्धान्त को स्वीकार किया है। वे मानव जीवन को संचालित और विकसित करनेवाली आदिम और नैसर्गिक वृत्ति पर समाज के अनावश्यक और अनुचित बन्धन का विरोध करते हैं। वे इसे मानव के स्वाभाविक विकास में बाधक मानते हैं तथा इसे कई मानसिक विकृत्तियों के जन्म का कारक स्वीकार करते हैं।

भीष्म साहनी के 'झरोखे' उपन्यास का बालक अपने परिवार और समाज से प्रेरित है। वह बाल्यकाल के परिवेश से संस्कार ग्रहण करता है जो आगे चलकर उसके व्यक्तित्व निर्माण की पृष्ठभूमि बनते हैं। परिवार और समाज में घटनेवाली घटनायें सूक्ष्म या विराट हो ये बालमन पर अपना समान प्रभाव डालती है। बचपन के संस्कार व्यक्ति के भावी जीवन की रूपरेखा ही नहीं तैयार करती बल्कि वह उसके विकास का गढ़न भी होती है।

मुख्य शब्द : मनोविज्ञान, बालक, व्यक्तित्व निर्माण, समाज विकास

प्रस्तावना

'झरोखे' उपन्यास में भीष्म साहनी ने बाल मनोविज्ञान का सूक्ष्म विश्लेषण किया है। लेखक के शब्दों में ''विस्मृति की अँधेरी खोह में पड़े अतीत के चित्रों के अंश, कागज के पुर्जों की तरह कभी–कभी उड़ने लगते हैं।..... क्या मेरी कल्पना ही इन अंशों को जोड़ने का, इन्हें रूप देने का प्रयास कर रही है।[1]'' 'झरोखे' का कथानायक बालक तत्कालीन परिवेश और उसके जीवन से जुड़ी समस्त छोटी–बड़ी घटनाओं का वर्णन करता है। भीष्म साहनी के अनुसार ''मेरे बचपन ने मुझे और कुछ दिया हो या नहीं दिया हो, पर थोड़ा दर्द जरूर दिया है। धनी परिवारों के बच्चों का जैसा तिरता–सा–बचपन मेरा नहीं था।[2]'' बालक के समक्ष घटनेवाली प्रत्येक घटना उसके भीतर एक प्रबल संस्कार का निर्माण करती है और परिवार में बच्चों के भावी चरित्र की रूपरेखा गढ़ती चली जाती है। बचपन में शगड़ी–बगड़ी कहलाने वाला बालक जीवन की प्रत्येक घटना का मूल्यांकन जिन्दगी के हर करवट में व्यापक सोच और समझ के साथ करता है। पाठक को जीवन के कटु सत्यों से अवगत कराना ही उसका लक्ष्य है। इस सन्दर्भ में राजेश्वर सक्सेना का विचार है '' झरोखे में चरित्र संरचना के विकास की यथार्थ परिस्थितियों का विश्लेषण हुआ है। ''[3] वहीं विवेक द्विवेदी के अनुसार '' झरोखे के कथानायक की मनः स्थिति कुछ इसी प्रकार है। बचपन से लेकर जवानी तक मानसिक अन्तर्द्वन्दों और आत्म विश्लेषण करने में है।''[4]

बचपन में बालक बीमार रहता है ''अँधेरा पड़ते ही छत पर असंख्य भूत–पिशाच उतर आते हैं और हर कोने में दरवाजे के पीछे से मेरी ओर झाँकने लगते हैं। माँ मेरे सिर पर हाथ फेरती है। '' इसका तो माथा तप रहा है, वह कहती है। मैं करवट बदल लेता हूँ और आँखों के सामने फिर से कभी प्रकाश और कभी अंधकार के पुंज फैलने–सिकुड़ने लगते हैं।''[5] गली में फकीर का आगमन, मोतीराम का बारहमासा, माँ–पिता जी का वार्तालाप और माँ की हँसी ''माँ जब हँसती है तो मेरी दुनिया बदल जाती है मुझे सबकुछ हल्का–हल्का और सहज लगने लगता है। माँ की सारी देह थिरक–थिरक जाती हैं और मैं माँ की गोदी में सिर छुपा लेता हूँ। फिर मुझे किसी बात से डर नहीं लगता । ''[6] परिवार में घटनेवाली अल्प और साधारण सी दिखनेवाली घटनायें संस्कार के रूप में अपना व्यापक प्रभाव छोड़ती हैं। लेखक यह स्वीकार करते हैं''बचपन के संस्कार कहाँ तक व्यक्ति के भावी जीवन को प्रभावित करते हैं, कहना कठिन है

पर उनकी भूमिका से इनकार नहीं और कहीं–कहीं पर तो वे निर्णायक भी सिद्ध होते हैं।''[7]

खेल के दौरान लड़कियाँ बलदेव को माँगती हैं और बालक का मन दुखी हो उठता है ''मैं पहले से जानता था कि वे बलदेव को माँगेंगी। वे रोज बलदेव को ही माँगती हैं। मेरा दिल मसोस उठता है और मैं माँ की जाँघ पर सिर रखे फिर से करवट बदल लेता हूँ।''[8] भाई तुलसी के साथ पिता जी की सहमति से गुरूकुल समाज में तीर कमान के खेल देखने जाना चाहता है किन्तु अँधेरा पड़ने के कारण माँ उन्हें जाने देना नहीं चाहती। बालक बीमार होते हुए भी जाना जाहता है ''मैं भी जाऊँगा! ''मैं चीख उठता हूँ।''[9] पिता जी बच्चों के जाने के पक्ष में रहते हैं जबकि माँ बीमार बच्चे को भेजना नहीं चाहती है ऐसे में बालमन विश्लेषण कर उठता है ''अभी तक माँ मेरी मित्र थी और पिता जी शत्रु। अब पिता जी मित्र हैं और माँ शत्रु बनती जा रही है। ''[10] अंततः भाई गुरूकुल समाज में तीर कमान के खेल देखने जाता है किन्तु बालक नहीं जा पाता और ''गरम, तपते आँसू मेरी आँखों के कोनों में से निकल–निकलकर बहने लगे हैं।''[11] बालक अपनी उपेक्षा का बदला भाई से कुछ इस प्रकार लेता है'' सोने से पहले मैं उससे लड़ता हूँ और उसे चिकोटियाँ काटता हूँ और नाखूनों से उसके हाथ की पीठ छील देता हूँ और इस तरह दिन–भर की उपेक्षा का बदला चुकाता हूँ । पर वह जवाब में कुछ नहीं कहता। मेरी ओर पीठ फेरकर सो जाता है।''[12] माँ जब हाथ जोड़कर दिवंगत बच्चों के सलामती की प्रार्थना करती है तब बालक यह महसूस करता है ''माँ जब हाथ जोड़कर कहती है, 'सलामत रहें सलामत रहें महाराज करें। तो वे तीनों मेरी कल्पना में आ जाती हैं , और मैं मन ही मन कहता हूँ जो वे मरती नहीं तो हम सात बच्चे होते, पाँच बहिनें, दो भाई! घर में दिन–भर खेला करते। और माँ कभी ये शब्द न कहती।''[13] पंडित जी बालक की तुलना में भाई को श्रेष्ठ ठहराते हैं तो बालक हीनता–बोध से ग्रसित होता है ''इसके बाद बहुत दिनों तक मुझे इस बात का डर बना रहता है कि कही दोनों माँ से मेरे दूसरे पाप की चर्चा न कर बैठें।''[14]

पिता जी का छाबड़ीवाले के साथ चोट लगने की घटना पर बाल सुलभ जिज्ञासा अपना रूप लेती है ''पिता जी की भी कोई उँगली मरोड़ सकता है, इसकी कल्पना कर पाना मेरे लिए कठिन है। घर में वह सबसे ऊँचे–लंबे हैं और हमेशा डाँटकर बोलते है। पिता जी ने उसे डाँट क्यों नहीं दिया? डाँट देते तो वह अपने–आप उँगली छोड़ देता।'' [15] तुलसी जब पिता जी की उँगली मरोड़ने वाले से बदला लेकर आता है तब बालक यह अनुभव करता है ''तुलसी मेरी नजरों में बहुत ऊँचा उठ गया है। वह मुझे बहुत बहादुर लगने लगा है। वह पिता जी के दुश्मन को पीटकर ही नहीं आया, उसके खीरे भी उठा लाया है।''[16] बालक कश्मीरवाले बड़े भाई से इस प्रकार प्रभावित है'' मुझे विश्वास है कि संसार में यदि किसी ने भगवान को देखा है तो इसने जरूर देखा होगा।'[17] और बालक अपने लिए विश्लेषण करता है ''पापियों को नजर नहीं आती।''वह निश्चय के साथ सिर हिलाकर कहता है।''[18] बालक के शब्दों में उसके मन का मूल्यांकन देखें ''मैं हताश–सा फर्श की ओर देखने लगता हूँ। मैं सचमुच पापी हूँ । मेरा भाई भी अनेकों बार मुझे कह चुका है। मैनें दो बार दोपहर के वक्त रसोईघर में छिपकर शक्कर खाई है, और किसी को बताया नहीं मेरे मुँह से गंदी गालियाँ भी निकल जाती हैं जो मेरे भाई के मुँह से नहीं निकलती, जिस कारण माँ कितनी ही बार मेरे मुँह में लाल मिर्चे डाल चुकी है। मेरा चेहरा भी पापियों जैसा पीला रहता है, जबकि इसका चेहरा और मेरे भाई का चेहरा भी ब्रम्हचारियों जैसा लाल और दमकता रहता है।''[19] इस प्रकार बालक का मन हीन–भाव से घिर जाता है।

बालक का घर के नौकर तुलसी के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है'' तुलसी का और हमारा चौबीस घंटे का साथ है तुलसी हमारे साथ हो तो मोहल्ले भर में किसी की हिम्मत नहीं कि हमारे साथ झगड़ा कर सके।''[20]

घर में घटनेवाली गतिविधियों को बालक बड़ी बारीकी से देखता है ''वे बहनें नहीं दो सफेद साए–से हैं जो सदा एक साथ घर में घूमते रहते हैं, भाग–भागकर एक कमरे से दूसरे कमरे में जाते है।''[21] इसी प्रकार बाहर की घटनाओं पर भी बालक की नजर है ''बुर्केवाली सभी औरतें ऐसा ही करती हैं सड़क पर चलती हैं तो बुर्का गिरा देती हैं। गली में चलती हैं तो बुर्का उठा लेती है।''[22] वह कश्मीरवाली बहन के साथ विश्लेषण करता है ''हमारे पंडित जी कहते हैं स्त्रियों के चेहरे की ओर देखना पाप होता है। मैं धीरे–धीरे कह रहा हूँ। ''पर तुम तो स्त्री नहीं हो, तुम तो लड़की हो''[23] यह बालक बड़ा होकर किताबों में से औरतों के तस्वीर फाड़ डालता है ''मैने अपनी सभी किताबों में से औरतों की तस्वीरें फाड़ दी हैं।''[24] इस सन्दर्भ में डॉ. सुरेश बाबर का विचार है ''हमारे समाज में बच्चों को अमनोवैज्ञानिक ढंग की शिक्षा दी जाती है। जैसे कि पर स्त्री के प्रति आँख उठाकर देखना पाप है। परन्तु मनोवैज्ञानिकों के मतानुसार आम तौर पर बचपन में लड़के लड़कियों की दोस्ती में बाद में स्त्री–पुरूष सम्बन्धों को स्वाभाविक बनाने में बड़ी मदद मिलती है।''[25] वहीं श्रीमती प्रभा खरे 'झरोखे' उपन्यास के सन्दर्भ में अपना मत कुछ इस प्रकार रखती है ''हिन्दू परिवार के दोनों लड़कों को ब्रह्मचर्य की शिक्षा दी जाती है। स्त्रियों के प्रति गैर मनोवैज्ञानिक दृष्टि दी जाती है, उन्हें बदलते हुए सामाजिक सम्बन्धों से पृथक रखा जाता है। फलस्वरूप उनमें ग्लानि और हीनता आ जाती है। वे दिशाहीन से हो जाते हैं। तथा समाज में एक सार्थक भूमिका निभाने में असफल हो जाते हैं, उनमें आत्मविश्वास नहीं रहता और वे एक विरासत–भरी 'मीडियाकर लाइफ' जीने को मजबूर हो जाते हैं। उनका विद्रोह किसी व्यक्ति से हो सकता है, पिता से हो सकता है, लेकिन व्यवस्था के बारे में वे सोच भी नहीं सकते। वे निर्णयहीनता की अनिवार्य नियति को भोगते हैं।''[26]

बालक को बचपन में पेशाबवाली जगह पर हाथ लगाने के कारण पंडित जी थप्पड़ मारते हैं तथा कीड़े पड़ने की बात कहते हैं। तथा माँ उसके मुँह में लाल मिर्च डालना चाहती है और बालमन विश्लेषण करता है ''पंडित

जी के चले जाने के बाद, नीचे की ड्योढ़ी में, एक कोने में बैठा मैं घबराया–सा सोच रहा हूँ वह आदमी जो गुरूकुल समाज के पास, नाले के किनारे बैठा रहता है, वह जरूर अपनी पेशाबवाली जगह को हाथ लगाता रहा होगा, तभी उसकी टाँगे सूज गई हैं और उन पर कीड़े रेंगते नजर आते हैं। और वह लँगड़ा फकीर भी जो टेढ़ा चलता हुआ हमारे महल्ले में आता हैं, वह भी.....[27]''।

भारत कुचेकर के अनुसार ''छोटे बच्चों को बचपन से ही अपने शरीर के प्रति उत्सुकता होती है। भीष्म साहनी के 'झरोखे' उपन्यास का शगड़ी–बगड़ी बचपन में जब पेशाबवाली जगह को हाथ लगाता है तो उसके अध्यापक उसे थप्पड़ मारते हैं और कीड़े पड़ने की बात कहते हैं। इससे उसकी जिज्ञासा वृत्ति कम नहीं होती बल्कि वह भयभीत होता है।''[28] बचपन के इस संस्कारवश बड़े होने पर वह वीर्यपात से परेशान होता है। वह स्त्री की ओर नहीं देखता, सुबह–शाम ठण्डे पानी से नहाता है, भोजन कम और खूब चबा–चबाकर खाता है, रात को दूध नहीं पीता, कसरत करता है और रातभर बैठकर गुजारता है और राजेश्वर सक्सेना कह उठते हैं ''झरोखे, उपन्यास में प्रवृत्ति दमन का, व्यक्तित्व दमन का चित्रांकन हुआ है। लाइफ इन्सटिंक्ट के अवरोध का वातावरण है। वीर्यपात और स्वप्नदोष से आतंकित होकर तरूण अपने यथार्थ विकास से विमुख हो जाते हैं। किताबों में से औरत के चित्र फाड़ डालते हैं–यह जीवन निषेध (life negation) है।''[29]

बचपन के ऐसे ही घटनाओं के साथ बालक युवक में परिणत होता है। भाई जीवन में अपना रास्ता चुनने चल पड़ता है और बालक माता–पिता के साथ रहकर व्यापार को आगे बढ़ाने का प्रयास करता है। परिवार ने तुलसी के बेटे को विभा बहन के बेटे राजीव के देख–रेख के लिए रख लिया है। 'झरोखे' उपन्यास की समग्रता पर रमेश दवे अपना विचार कुछ इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं'' 'झरोखे' में एक ऐसा बालक उपन्यास की केन्द्र वस्तु है जो छोटी–छोटी घटनाओं की पारिवारिकता को संवेदनशील और मार्मिक बना देता है। बच्चों को अपनी ही अनुभूतियों में जीते नाना प्रकार के पारिवारिक जीवन–क्षणों से गुजरते और अपने समूचे बाल–संवेदन से भौतिक सत्यों के अन्दर आँकते दिखाकर भीष्म जी ने जो 'झरोखे' बालक की भावगत भूमि पर रचे हैं, उनसे उपन्यास में एक नई दृष्टि यह पैदा हुई है कि परिवार प्रौढ़ों का आरामगा या साम्राज्य नहीं है बल्कि उस साम्राज्य में बालक एक ऐसा झरोखा है जो उस साम्राज्य के सारे मर्म सारे सुख–दुख आनन्द और ऊब सबको एक साथ देख सकता है।''[30]

इस प्रकार 'झरोखे' उपन्यास का बालक अपने बचपन में घटित विभिन्न घटनाओं द्वारा बालमन का विश्लेषण ही नहीं करता वरन् वह संस्कार एवं व्यक्तित्व निर्माण के रूप में रस भी ग्रहण करता है जो उसके भावी जीवन को दिशा देने में निर्णायक भी साबित होती है।

उद्देश्य

वास्तविक पारिवारिक माहौल के अन्तर्गत बाल्यकाल की घटनायें व्यक्ति के चरित्र–निर्माण की पृष्ठभूमि के रूप में कार्य करती हैं। जैसे शाम होते ही प्रकाश और अन्धकार का उलझना, गली में फकीर का आगमन, खेल में लड़कियों द्वारा बड़े भाई का चुना जाना, बीमार रहने के कारण बालक में हीन भाव का जन्म लेना, बहनों का एक कमरे से दूसरे कमरे में साये की तरह घूमना और तुलसी का ग्रामीण व्यवहार आदि। बालक इन घटनाओं और द्वन्द्वों को सहज रूप में ग्रहण करता है। वह अपने सामाजिक परिवेश एवम् परम्पराओं तथा निष्ठाओं से जीवन रस लेता है तथा परिवार में घटने वाली ये छोटी–छोटी घटनायें बालक के जीवन की दिशा निर्धारित करने में निर्णायक साबित होती हैं।

निष्कर्ष

भीष्म साहनी ''झरोखे'' उपन्यास में कथानायक बालक द्वारा तत्कालीन परिवेश और बालक के जीवन से जुड़ी समस्त छोटी–बड़ी घटनाओं का चित्रण करते हैं। बचपन में शगड़ी–बगड़ी कहलानेवाला बालक जीवन की प्रत्येक घटना का मूल्यांकन जिन्दगी के हर करवट में व्यापक सोच और समझ के साथ करता है तथा पाठक को जीवन के कटु–सत्यों से अवगत कराना ही उसका लक्ष्य है। परिवार में घटित घटनायें बच्चों के चरित्र विकास में किस प्रकार अपना योगदान देती हैं एवम् एक–एक घटनायें एक–एक प्रबल संस्कार बनकर आती हैं। लेखक इसका सूक्ष्म विश्लेषण करते है। झरोखे में जीवन के उल्लसित क्षणों के साथ मध्यम वर्गीय जीवन के दुःख–दर्द और उसकी बहुविध त्रासदियों का अविस्मरणीय वर्णन है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. साहनी भीष्म 'झरोखे' राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1967, पृ. 7
2. सक्सेना राजेश्वर/ठाकुर प्रताप 'भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना,' वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2005, पृ. 54, 55
3. वही पृ. 83
4. द्विवेदी विवेक, 'भीष्म साहनी उपन्यास साहित्य, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 1998, पृ. 275
5. साहनी भीष्म, 'झरोखे' राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1967,पृ. 8,9
6. वही पृ. 9
7. साहनी भीष्म, 'आज के अतीत' राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003, पृ.41
8. साहनी भीष्म, 'झरोखे' राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1967, पृ. 11
9. साहनी भीष्म, 'झरोखे' राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1967 पृ.14
10. वही पृ. 15
11. वही पृ. 15
12. वही पृ. 17.18
13. वही पृ. 40
14. वही पृ. 37
15. वही पृ. 27
16. वही पृ. 30
17. वही पृ. 68

18. वही पृ. 68
19. वही पृ. 68
20. वही पृ.14
21. वही पृ.15
22. वही पृ. 22
23. वही पृ. 67
24. वही पृ. 99
25. बाबर डॉ. सुरेश,'भीष्म साहनी' के साहित्य का अनुशीलन, अन्नपूर्णा प्रकाशन,कानपरु, 1997 पृ.98
26. सक्सेना राजेश्वर! ठाकुर प्रताप 'भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 1969, पृ. 114
27. साहनी भीष्म, 'झरोखे' राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1967, पृ.36
28. कुचेकर डॉ. भारत, 'भीष्म साहनी' व्यक्तित्व एवं कृतित्व, विनय प्रकाशन, कानपुर, 2004. पृ. 99
29. राजेश्वर सक्सेना/ठाकुर प्रताप 'भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना' वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2005, पृ. 84
30. दूबे रमेश 'आलोचना त्रैमासिक अंक 17.18 वर्ष 2004. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2004, पृ. 84